P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-II * Issue-X*June-2015

प्रेमचन्द के उपन्यासों में दलित–चित्रण

गुरमीत सिंह
व्याख्याता,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
बून्दी (राज.)

सारांश

साहित्य में दलित–लेखन वर्तमान समय की आवश्यकता है। प्रेमचन्द का साहित्य भारतीय लोक शास्त्र के साथ–साथ गाँव एवं गरीबों का समाजशास्त्र रहा है। उन्होंने न केवल यथार्थ की जीवंत अभिव्यक्ति दी वरन् किसानों व दलितों के स्वाभिमान को भी जगाया। समाज के उपेक्षित एवं प्रताड़ित पक्ष जिनमें स्त्री, शूद्र (दलित) और किसान व मजदूर जैसे सर्वहारा वर्ग की समस्याओं का चित्रण और उनका समाधान खोजने का सरल प्रयास उनके उपन्यासों में प्रमुखता के साथ मिलता है। दलितों की पीड़ामयी मनोदशा को यद्यपि वे ही व्यक्ति बेहतर समझ सकते हैं जिन्होंने भोगा है, जो मिटे हैं, जो प्रताड़ित हुए हैं, जिन्होंने सहा है, ''जाके पाँव न फटे बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई'' नामक उक्ति चरितार्थ होती है, लेकिन फिर भी कुछ संवेदनशील रचनाकार ऐसे होते हैं, जो गैर दलित होते हुए भी अपनी रचना में उपेक्षित वर्ग को पूरा सम्मान देते हैं, उनकी आवाज बनते हैं। प्रेमचन्द भी उन्हीं रचनाकारों में से हैं, जिन्होंने बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दौर में शोषित वर्ग को अपने साहित्य में चित्रित किया।

मुख्य शब्द : दलित, जुल्म, बिवाई, सहानुभुति, सम्मान, यथार्थ, सहृदयता, संघर्ष।

प्रस्तावना

साहित्य में दलित–लेखन वर्तमान समय की आवश्यकता है। उपेक्षितों, प्रताड़ितों की पीड़ामयी मनोदशा को यद्यपि वही व्यक्ति बेहतर समझ सकते हैं जिन्होंने भोगा है, जो मिटे हैं, जो प्रताड़ित हुए हैं, जिन्होंने सहा है, ''जाके पाँव न फटे बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई'' नामक उक्ति चरितार्थ होती है लेकिन फिर भी कुछ संवेदनशील रचनाकार ऐसे होते हैं जो गैर दलित होते हुए भी अपनी रचना में उपेक्षित वर्ग को पूरा सम्मान देते हैं, उनकी आवाज बनते हैं। प्रेमचन्द भी उन्हीं रचनाकारों में से हैं, जिन्होंने बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दौर में शोषित वर्ग को अपने साहित्य में चित्रित किया।

प्रेमचन्द का साहित्य भारतीय लोक शास्त्र के साथ–साथ गाँव एवं गरीबों का समाजशास्त्र भी है। प्रेमचन्द पहले ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने साहित्य में जमीन व मिट्टी की खुशबू पैदा की। उन्होंने न केवल यथार्थ की जीवंत अभिव्यक्ति दी वरन् किसानों व दलितों के स्वाभिमान को भी जगाया। दलितों पर जुल्म और अत्याचार तथा उनके सम्मानपूर्ण व समानता पर आधारित जीवन को सुनिश्चित करने का प्रश्न आज भी हमारे सामने प्रमुख सरोकारों के रूप में उपस्थित है। प्रेमचन्द–चिंतन आज भी हमारा पथ प्रदर्शन करता ह और नयी सोच व चेतना की उपयुक्त वैचारिक आधारभूमि बनाता है।

कागज की जमीन पर कलम से मजदूरी करने वाले कुशल कथा शिल्पी प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास विधा को मानव जीवन की यथार्थ समस्याओं से सम्बद्ध करते हुए एक सशक्त विधा बनाने का अपूर्व कार्य किया है। उन्होंने उपन्यास साहित्य को यथार्थ की धरती पर खड़ा किया और उसे कला की ऊँचाईयों को छू लेने की शक्ति प्रदान की। उन्हीं से हिन्दी उपन्यास में दलित वर्ग के चित्रण का आरम्भ होता है। ''उनके साहित्य में शोषित एवं पीड़ित वर्ग के प्रति कोरी सहानुभूति ही नहीं है वरन् शोषक वर्ग के प्रति सक्रिय घृणा, आक्रोश का भाव भी उत्पन्न होता है और संघर्ष की भावभूमि तैयार होती है।''[1]

प्रेमचन्द प्रथम भारतीय लेखक हैं जो अवर्णों और सवर्णों के बीच रोटी–बेटी सम्बन्ध स्थापित करते हैं। जहाँ रोटी का सम्बन्ध 'कर्मभूमि' में स्थापित होता है वहीं बेटी का सम्बन्ध उनके 'गोदान' में। समाज क उपेक्षित एवं प्रताड़ित पक्ष जिनमें स्त्री, शूद्र (दलित) और किसान व मजदूर जैसे सर्वहारा वर्ग की समस्याओं का चित्रण और उनका समाधान खोजने का सरल प्रयास उनके उपन्यासों में प्रमुखता के साथ मिलता है। वैश्यावृत्ति, विधवा विवाह, बेमेल विवाह, ऊँच–नीच, गरीबी, अशिक्षा, अन्ध–विश्वास, रूढ़िवादिता आदि विषयों पर पूरी ईमानदारी के साथ प्रेमचन्द की लेखनी चली है। समस्याओं का समाधान प्रारम्भ

में उन्होंने आदर्शवादी और गाँधीवादी तरीके से दिया, लेकिन लेखन की प्रौढ़ता के साथ–साथ उनका झुकाव यथार्थ की ओर बढ़ता चला गया।

प्रेमाश्रम और दलित–चित्रण

प्रेमचन्द के प्रेमाश्रम उपन्यास में कुछेक स्थानों पर दलित वर्ग का चित्रण मिलता है। सामन्ती शासन के अन्तर्गत बेगार के रूप में हाकिमों के दौरे पर उनके घोड़ों के लिए घास छीलना चमारों का काम था। घास छीलने के लिए जब एक चपरासी भगत को आदेश देता है तो भगत उसके उत्तर में कहता है– ''घास चमार छीलते हैं। यह हमारा काम नहीं।''[2]

सरकारी बेगार में पारिश्रमिक मांगना एक प्रकार से अपराध समझा जाता था। तहसीलदार के दौरे पर चमारों द्वारा जब घास छीलने की मजदूरी मांगी जाती है तो तहसीलदार नाजिर को आदेश देता है–''आप मेरा मुँह क्या देख रहे हैं? चपरासियों से कहिए इन चमारों की अच्छी खबर ले। यही इनकी मजदूरी है।''[3] नाजिर के कहने पर चपरासियों ने बेगारों को घेरना शुरू किया। कान्स्टेबलों ने भी बन्दूकों के कुन्दे चलाने शुरू किए।

इस प्रकार प्रेमाश्रम उपन्यास में दलित वर्ग का चित्रण बेगारियों के रूप में हुआ है। उस समय बेगार प्रथा शासन की क्रूरतम अमानवीय एवं अन्यायपरक व्यवस्था थी जिसमें दलित वर्ग से मनचाहा काम लिया जाता था और बदले में मजदूरी मांगने पर निर्ममता से उन्हें पीटा जाता था। प्रेमचन्द की दलित वर्ग के साथ पूरी सहानुभूति दिखाई देती है और सामन्ती शासन की निर्दयता भी इस उपन्यास में प्रखरता के साथ परिलक्षित होती है।

रंगभूमि में दलित–चित्रण

'रंगभूमि' का नायक सूरदास जाति से चमार है। इस उपन्यास में दलित वर्ग के एक व्यक्ति को पहली बार नायकत्व प्राप्त हुआ है। यद्यपि सूरदास के माध्यम से दलित वर्ग की कथा नहीं कही जाती और उसे सम्पूर्ण पराधीन भारतीय जनता का प्रतिनिधि बताया जाता है फिर भी पूंजीपति वर्ग के अत्याचारों के कारण दलित वर्ग का शोषण इस उपन्यास की केन्द्रीय विषय वस्तु बन गई है। पूंजीपति जॉन सेवक सूरदास की खाली भूमि को खरीद कर उस पर सिगरेट का कारखाना स्थापित करना चाहता है। सूरदास इस भूमि को किसी भी मूल्य पर बेचना नहीं चाहता। उसकी रक्षा के लिए वह अन्त तक संघर्ष करता हुआ शहीद हो जाता है।

सूरदास का नायकत्व विशेष महत्व रखता है। वह भेद–भावपूर्ण व्यवस्था के विरोध में लड़ता है। अछूत होते हुए भी उसका व्यक्तित्व विशेष है– ''रंगभूमि का सूरदास डेढ़ पसली का आदमी है लेकिन जब तनके खड़ा होता है तब ताकतवर पूंजीपति और सामन्त का कलेजा भी दहल जाता है।''[4]

सूरदास की तब बड़ी नैतिक विजय होती है, जब पाण्डेपुर में सूरदास की प्रतिमा स्थापित किये जाने के अवसर पर हुए प्रीतिभोज में सवर्ण–अछूत एक ही पंगत में बैठकर भोजन करते हैं। उसकी मृत्यु के बाद उसका बनाया जाने वाला स्मारक आदान–प्रदान की जाने वाली भारतीय मनोवृत्ति का उपहासात्मक प्रतीक है। सूरदास प्रतीक है उस दलित वर्ग का जिसका पूंजीपति अधिकारपूर्वक शोषण करते हैं और उसे मरने हेतु मजबूर कर देते हैं।

कर्मभूमि में दलित–चित्रण

इस उपन्यास की मूल कथा स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु चलाए जा रहे सत्याग्रह आन्दोलन पर आधारित है। अछूतों और किसानों की समस्याएँ उसी का अंग बन कर आती हैं। इस उपन्यास में प्रेमचंद ने हमारे समाज की आर्थिक विषमता का सच्चा चित्र खींचा है। उन्होंने एक ओर नगर के पूंजीपति और गाँव के जमींदार वर्ग के ऐश्वर्य का स्वर्ग अंकित किया है तथा दूसरी ओर नगर के अछूत एवं गाँव के किसान के जीवन के खण्ड़हरों को दिखाया है।

इस उपन्यास में प्रेमचन्द गाँव में अछूत समस्या को आर्थिक शोषण से सम्बद्ध करके देखते हैं। उनके चित्रण से स्पष्ट हो जाता है कि शराबबन्दी, मुर्दा माँस खाने की प्रथा सुधार और शिक्षा प्रचार से ही अछूतों की समस्या का हल नहीं होगा। भारत की शेष शोषित जनता के समान ही अछूतों की मूल समस्या भी मूलतः आर्थिक है। इसी कारण 'कर्मभूमि' के चमार दूसरे किसानों से कन्धे से कन्धा मिलाकर जमीदारों और नौकरशाही के अत्याचारों के विरूद्ध संघर्ष करते हैं।

पूर्वजन्मों के कर्मों के कारण लोग दरिद्र और धनवान होते थे लेकिन वर्ग चेतना के कारण यह विश्वास ध्वंस कर दिया गया है। ईश्वर और धर्म के नाम पर किये जा रहे प्रत्येक अन्याय, शोषण और अनीति का शोषित लोग सक्रिय होकर विरोध कर रहे थे। चमारों का चौधरी गूदड़ पूर्व जन्म के फलों के संस्कारवादी सिद्धान्तों का विरोध करता है– ''ये सब मन को समझाने की बात है बेटा, जिससे गरीबों को अपनी दशा पर सन्तोष रहे और अमीरों के राग रंग में किसी तरह की बाधा न पड़े। लोग समझते हैं कि भगवान ने हमको गरोब बना दिया। आदमी का क्या दोष? पर यह कोई न्याय नहीं है कि हमारे बाल–बच्चे तक काम म लगे रहें और भोजन न मिले और एक–एक अफसर को दस–दस हजार की तलब मिले।''5

इस उपन्यास का मुख्य पात्र अमरकान्त घर छोड़कर अछूतों के गाँव में जा बसता है। रैदास परिवारों का यह एक छोटा सा गाँव है जहाँ अमरकान्त एक छोटी सी पाठशाला में पढ़ाने लगता है। एक कुलीन परिवार के युवक को अपने गाँव में टिकते देखकर सलोनी काकी को आश्चर्य होता है तो अमरकान्त उसे विश्वास दिलाता है–

''मैं जात–पांत नहीं मानता माताजी। जो सच्चा हो, वह चमार भी हो, आदर के योग्य है, जो दगाबाज झूठा लम्पट हो वह ब्राह्मण भी हो तो आदर के योग्य नहीं है।''[6]

लेखक का प्रयोजन दलितवर्गीय लोगों की मानवता, सहृदयता, त्याग, स्वार्थहीनता और सरल जीवन चित्रण करना भी रहा है जो स्पृहणीय है। सलोनी और मुन्नी जैसे दलित–पात्रों का उल्लेख इसका उदाहरण है। इस उपन्यास में ग्राम और शहर दोनों ही मोर्चों पर दलित वर्ग को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए चित्रित किया है। उन्होंने दलितों को मन्दिर में प्रवेश कराने के साथ–साथ जमींदार से अपने अधिकारों के लिए लड़ते हुए भी दिखाया है।

गोदान में दलित–चित्रण

गोदान प्रेमचंद का विशिष्ट उपन्यास है जिसमें उनका आदर्श के प्रति मोहभंग स्पष्ट परिलक्षित होता है। इस उपन्यास में दलित वर्ग का चित्रण मातादीन–सिलिया की कथा के माध्यम से होता है। सिलिया चमारन की कथा मूल कथा के विकास में सहायक होती हुई भी उसके समानान्तर चलती है। लेखक की लेखनी सिलिया की कथा का चित्रण करते समय मूल कथा के विकास की अपेक्षा सवर्ण–अवर्ण की समस्या को उठाने तथा उसे मार्मिक रूप में चित्रित करने में अधिक रमी है–

''मातादीन का सिलिया से अवैध सम्बन्ध है। वह उससे शादी करने को तैयार नहीं है। निरन्तर शारीरिक सम्बन्ध रखने पर उसके ब्राह्मणत्व पर कोई आँच नहीं आती किन्तु उसी औरत से शादी करने पर ब्राह्मणत्व नष्ट होने का खतरा है। उच्च वर्ग की इस दुहरी नैतिकता पर प्रेमचन्द व्यंग्य करते हैं।''[7]

अछूतों को समाज में प्रतिष्ठित करने के लिए आवश्यक था कि उनसे शादी सम्बन्ध भी हो। प्रेमचंद ने गोदान में यह कर दिखाया है, जब मातादीन रूढ़िवादी धर्म त्याग कर सिलिया को स्वीकार करता है और पाठकों के सम्मुख अनुभूति सत्य रखता है– **''मैं ब्राह्मण नहीं चमार ही रहना चाहता हूँ। जो अपना धर्म पाले वही ब्राह्मण है, जो धर्म से मुँह मोड़े वही चमार है।''**[8]

अन्ततः प्रेमचन्द की स्थापना की विजय होती है। लेखक ने सिलिया की अवतारणा एवं सिलिया–मातादीन सम्बन्ध के माध्यम से दलित वर्ग के आर्थिक, सामाजिक, दैहिक एवं भावनात्मक शोषणपरक सवर्णों की दोहरी नैतिकता को अभिव्यक्ति दी है। अन्त में मातादीन मानवीय सम्बन्धों को महत्व देता हुआ सिलिया को अंगीकार कर लेता है। इस अन्त के द्वारा लेखक ने जाति–पांति से जुड़े धार्मिक अन्धविश्वास एवं पौरोहित्य की व्यर्थता सिद्ध की है।

संदर्भ–संकेत

1. हिन्दी उपन्यास– सामाजिक चेतना– डॉ. कुँवरपाल सिंह, पृष्ठ 8–9
2. प्रेमाश्रम– प्रेमचन्द, पृष्ठ 274
3. वही–पृष्ठ 280
4. आलोचना– त्रैमासिक उपन्यास, अंकः जनवरी–जून (64–65) 83 आलोचक– विजेन्द्र नारायण सिंह, पृष्ठ 96
5. कर्मभूमि– प्रेमचंद, पृष्ठ 157
6. कर्मभूमि– प्रेमचंद, पृष्ठ 148
7. हिन्दी उपन्यास– सामाजिक चेतना– डॉ. कुँवरपाल सिंह, पृष्ठ 99
8. गोदान– प्रेमचंद, पृष्ठ 357